23
महात्मा गांधी

महात्मा गांधी युगपुरुष थे। विश्व के राजनीतिक इतिहास में महात्मा गांधी जैसा उदाहरण नहीं मिलता जिसने अपने सत्य और अहिंसा के बल से विश्वव्यापी बलवान विदेशी शासन को अपने देश से उखाड़ फेंका हो। महात्मा गांधी ने यही किया। उनके सत्य, अहिंसा और शत्रु को भी न धोखा देने के मानवीय सद्‌गुण ने विश्व के जन-मानस को मोह लिया।

1. जन्म

महात्मा गांधी का पूरा नाम था 'मोहनदास करमचंद गांधी'। 'मोहनदास' तो उनका नाम था, 'करमचंद' उनके पिता का नाम था और 'गांधी' उनके परिवार की उपाधि थी। गुजरात में व्यक्ति के नाम के साथ उसके पिता का नाम भी कहा और लिखा जाता है।

पिता 'करमचंद' के औरस तथा माता 'पुतलीबाई' के गर्भ से 'मोहनदास करमचंद गांधी' का पोरबन्दर गुजरात में 2 अक्टूबर, 1869 ई० में जन्म हुआ। जिस परिवार में जन्म हुआ वह मध्यम वर्गीय बनिया था, परन्तु वह अपने परम्परागत धंधा व्यापार को छोड़ कई पीढ़ियों से काठियावाड़ के रियासतों में नौकरी करता था और दीवान तथा मंत्री तक के पदों पर आसीन रहता था। मोहनदास के पिता करमचंद गांधी स्वयं एक रियासत में दीवान थे और स्वभाव से सच्चरित्र, कुटुम्बप्रेमी, सत्यवादी, साहसी और उदार थे। माता पुतलीबाई भी धर्मपरायणा और सदाचारनिष्ठ थीं। साथ-साथ बुद्धिमान थीं और उनकी सूझबूझ से रनिवास की नारियां भी लाभ उठाती थीं।

2. विद्यार्थी जीवन

गांधी जी अपने बचपन में लज्जालु और संकोची थे। यह उनका स्वभाव इंग्लैण्ड में अध्ययन करते समय तक रहा। परन्तु वे कर्तव्यनिष्ठ, समय के नियमबद्ध, सत्य में निष्ठा रखने वाले और धर्मभीरु थे। वे पढ़ाई में कभी नकल नहीं करते थे।

एक विद्यार्थी ने गांधी जी को सुझाया कि अंग्रेज लोग इसलिए संसार में उन्नत हैं, क्योंकि वे मांस खाते हैं। इससे प्रभावित होकर वे चोरी से मांस खाने

लगे। परन्तु उन्होंने इसे शीघ्र ही छोड़ दिया; क्योंकि यह भक्त माता-पिता को धोखा देना था।

3. विवाह

गांधी जी का तेरह वर्ष की अवस्था में ही विवाह कर दिया गया। वे अपनी पत्नी पर बहुत आसक्त थे। परन्तु अपने आचरणनिष्ठ स्वभाव से वे प्रात: उठकर अपने नित्यकर्म में लग जाते थे। किसी को धोखा नहीं देना चाहिए इस धारणा के कारण वे संयमित बने रहे। वे स्वयं लिखते हैं कि मैं यदि अपने कर्तव्य के लिए दृढ़ निष्ठावान न होता, तो किसी भयंकर बीमारी में फंस जाता या मेरी अकाल मृत्यु हो जाती।

4. इंग्लैण्ड प्रस्थान

गांधी जी ने मैट्रिकुलेशन परीक्षा पास की। पिता का देहान्त हो चुका था। गांधी के बड़े भाई ने उन्हें बैरिस्ट्री पढ़ने के लिए इंग्लैण्ड भेजने की योजना बनायी, परन्तु उन दिनों तथाकथित उच्च हिन्दू जाति के लोगों को पण्डित समुद्र पार विदेश जाने की अनुमति नहीं देते थे। इसमें कारण था कि वहां कट्टर हिन्दू-आचार-विचार का निभना कठिन था। इसके साथ प्राय: जो युवक विलायत जाते थे वे सुरा, सुन्दरी और मांसाहार में लीन हो जाते थे। उनके खान-पान, वेष, व्यवहार सब बेढंगे हो जाते थे।

पिता के देहांत से घर की आर्थिक स्थिति बिगड़ गयी थी। भाई ने रुपये उधार लेकर गांधी जी को विलायत भेजने का प्रबन्ध कर लिया। अंतिम निर्णय माता को देना था। गांधी जी विदेश जाने के उत्सुक थे। माता ने गांधी जी को तीन प्रतिज्ञाएं करायीं—''तुम्हें स्त्री, शराब और मांस नहीं छूने हैं।'' गांधी जी ने नियमपूर्वक व्रत लिया। गांधीजी के एक भाग के खर्चे के लिए रुपये उनकी पत्नी के आभूषण बेचकर दिये गये। वे अपनी अठारह वर्ष की अवस्था में इंग्लैण्ड गये।

5. इंग्लैण्ड प्रवास

गांधीजी को इंग्लैण्ड में कई कठिनाइयां आयीं। एक तो उनका स्वभाव दब्बू था। वे अधिक चुपचाप रहते थे। दूसरे उस मांसाहारी देश में उनको शुद्ध भोजन मिलना कठिन था। उन्हें कई बार भूखा या आधा पेट रह जाना पड़ता था। वहां के मित्र उन्हें मांस खिलाना चाहते, परन्तु वे अपने शपथ में दृढ़ थे। अंतत: बहुत खोज के बाद उन्हें एक शाकाहारी होटल मिल गया। उन्होंने वहां पेट भर भोजन किया।

अभी तक तो वे माता से शपथ लेने के कारण मांस नहीं खाते थे और सोचते थे कि कभी भारत जाकर मैं खुले रूप में मांस खाऊंगा और हर

भारतीय को राय दूंगा कि वह मांस खाये। परन्तु आगे चलकर यह विचार बदल गया। उन्होंने इंग्लैण्ड में देखा कि बहुत-से अंग्रेज मांसाहार के विरोध में हैं। वहां उन्होंने शाकाहारी भोजन पर बहुत-सी पुस्तकें पढ़ीं। वहां शाकाहारियों की इस विषय में गोष्ठियां होती थीं। उसमें गांधी जी सम्मिलित होने लगे। उनसे भी गोष्ठी में बोलने के लिए कहा जाता, परन्तु वे अपने संकोची स्वभाव-वश बोल नहीं पाते थे। वे लिखते हैं कि मुझे कुछ सूझ ही नहीं होती थी कि मैं अपनी बात कैसे प्रस्तुत करूं। उनका यह स्वभाव पूरे इंग्लैण्ड-प्रवास तक रहा। परन्तु उन्होंने लिखा है कि इससे मेरी हानि होने के बदले लाभ ही हुआ। इससे बोलने में मेरी मितव्ययिता की आदत हुई।

गांधी जी मांसाहारी भोजन न करने से अपने मित्रों को संतुष्ट नहीं कर सके, परन्तु उन्होंने उन्हें संतोष देने के लिए उन-जैसा वेशभूषा अपनाया, नाचना तथा वायलिन बजाना शुरू किया, परन्तु वे इनमें सफल न हो सकने से छोड़ दिये। हां, वे कपड़े उन जैसे पहनते रहे।

गांधी जी ने इंग्लैण्ड में बैरिस्ट्री तो पढ़ी ही, फिर से मैट्रिक परीक्षा भी दी और उसमें वे उत्तीर्ण हुए। साथ-साथ उन्होंने लैटिन भाषा भी सीख ली जिससे रोमन कानून मूल रूप में पढ़ सकें। वे वहीं रहते-रहते 1891 ई० में बैरिस्टर घोषित हुए।

इंग्लैण्ड में रहते-रहते गांधी जी शाकाहारियों, सुधारकों एवं पादरियों से मिलते रहे। पादरी उन्हें अपनी तरफ खींचने के प्रयास में रहे, परन्तु वे नहीं खिंचे। हां, इससे अपने हिन्दुत्व के धर्मशास्त्रों को पढ़ने के लिए उनका मन प्रेरित हुआ। उन्होंने वहीं रहते हुए ''आर्नल्ड' का गीता-अनुवाद पढ़ा और उससे वे बहुत प्रभावित हुए। फिर 'आर्नल्ड' कृत 'लाइट ऑफ एशिया' पढ़ी। इसके बाद बाइबिल पढ़ी। बाइबिल के पुराने नियम से वे कुछ लाभ न ले सके। उन्हें उसके नये नियम से लाभ मिला। क्योंकि उसके उपदेश गीता तथा हिन्दू-परम्परा के शास्त्रों से मेल खाते थे।

वे वहां अन्त तक लज्जाशील बने रहे। वे तभी बोलते, जब उनसे कोई बोलता। इंग्लैण्ड से लौटते समय जब उन्होंने मित्रों को विदाई-पार्टी दी, तब उसमें वे केवल इतना बोल सके—''आप लोगों को धन्यवाद, महाशयो, मेरे आमंत्रण को कृपया स्वीकार कर यहां पधारने के लिए।''[1]

वे तीन वर्ष इंग्लैण्ड में रहकर भारत लौट आये और केवल बैरिस्ट्री में ही उत्तीर्ण होकर नहीं, किन्तु अपनी पूज्य माताजी से लिए तीन शपथों में भी उत्तीर्ण होकर।

---

1. **जीवतराम भगवान दास कृपलानी कृत ''महात्मा गांधी : जीवन और चिंतन'', पृष्ठ 9 (प्रकाशन 1978 ई०)। सूचना और प्रकाशन विभाग भारत सरकार।**

6. भारत में वकालत में असफल

गांधी जी 1891 में भारत आये। वे राजकोट में वकालत नहीं कर सके। उन्हें वहां के वकीलों के पास भी खड़े होने की हिम्मत नहीं रहती थी। वे बम्बई चले गये। वहां खर्चा लम्बा, परन्तु आमदनी नहीं के बराबर। वे जब एक छोटी अदालत में एक मुकदमें के सिलसिले में बहस करने खड़े हुए, तो उनके पैर कांपने लगे और सिर चकराने लगा। अत: वे हतप्रभ होकर बैठ गये। उन्होंने मुकदमा दूसरे वकील को दे दिया। फिर उनको लौटकर जानने की भी उत्सुकता नहीं हुई कि उसमें क्या हुआ।

एक कठिनाई थी उनकी ईमानदारी। कोई मुकदमा उनके पास आता तो उसमें दलाल को कमीशन देने का प्रश्न आता। उन्होंने सुना कि बड़े वकीलों में भी कुछ ऐसा करते हैं। परन्तु गांधी जी इसे नहीं स्वीकार पाते। वे स्कूल में अध्यापन का काम खोजने लगे, परन्तु नहीं मिला। अन्तत: बम्बई से पुन: राजकोट आ गये और वकीलों से कागजी काम लेकर मुकदमें का मसौदा बनाने लगे। परन्तु यहां भी वही बात थी वकीलों को मसौदे में भी कमीशन देना।

गांधीजी का मन ऊब गया। उन्हें लगा कि चाहे अंग्रेज हों या भारतीय, सभी अफसर एवं नौकरशाही दंभी-व्यवहार के हैं। इधर रियासतों के काम षड्यंत्र भरे होते थे। उनका काम लेना भी कठिन था। अत: वे अवसर पाकर दक्षिण अफ्रीका चले गये।

7. दक्षिणी अफ्रीका प्रवास

दक्षिण अफ्रीका में भारत के विविध प्रांतों से हिन्दू, मुसलमान, पारसी आदि आकर बसे थे। उनमें छोटे सरकारी नौकर, व्यापारी, स्वतन्त्र-मजदूर, गिरमिटिया (शर्तबंद मजदूर) आदि थे। एक गुजराती मुसलमान का वहां फर्म था ''दादा अब्दुल्ला एण्ड कम्पनी।'' उसका एक मुकदमा था। इस मुकदमें के सिलसिले में गांधी जी दक्षिण अफ्रीका गये। काम एक वर्ष का था। उस मुकदमें में अंग्रेज वकील था। कागज तथा चिट्ठी-पत्री गुजराती भाषा में होने से गुजराती वकील की सहायता आवश्यक थी। कम्पनी के आग्रह पर गांधी जी जल-जहाज से अप्रैल, 1893 ई० में बम्बई से दक्षिण अफ्रीका गये।

दक्षिण अफ्रीका में गोरे अंग्रेजों का राज्य था। वहां के मूल निवासियों को भी गोरे अंग्रेज उपेक्षा से देखते थे फिर भारतीयों को तो कहना ही क्या। अंग्रेज भारतीय मजदूरों से गुलामों-जैसा व्यवहार करते थे। भारतीयों को जमीन खरीदने, सम्पत्ति, व्यापार सब में असुविधा थी। भारतीय लोग ट्रेन तथा ट्रामों में अंग्रेजों के साथ नहीं बैठ सकते, उन्हें अलग से बैठना पड़ता था। वे सब

होटलों में नहीं जा सकते थे। हर भारतीय को तीन पौंड कर देना पड़ता था। वे ऐसी जगह रहने की अनुमति पाते थे जहां प्रकाश तथा जल की असुविधा होती थी और गन्दा पानी निकलने की सुविधा नहीं रहती थी।

गांधी जी 'डरवन' के कोर्ट में गये। वे लम्बा कोट तथा पगड़ी पहने थे। अंग्रेज जज ने उनसे पगड़ी उतारने को कहा। गांधी जी ने नहीं उतारी और कोर्ट से बाहर चले गये। वैसे उनका मुख्य काम 'प्रीटोरिया' में था, अत: वे वहां के लिए चल दिये। उन्हें फर्म की तरफ से प्रथम श्रेणी के टिकट का पैसा मिलता था। अतएव वे टिकट कटाकर गाड़ी में जा बैठे। अंग्रेज यात्रियों ने उन्हें भारतीय होने से उस डिब्बे से उतरकर दूसरी श्रेणी के डिब्बे में जाने की बात कही। गांधी जी ने अपना प्रथम श्रेणी का टिकट दिखाया। अंग्रेजों ने उन्हें धक्का देकर डिब्बे से उतार दिया और उनका सामान प्लेटफार्म पर फेंक दिया। गांधी जी ने स्टेशन के प्रतीक्षालय में रात ठण्डी में ठिठुरकर बितायी। उन्हें किसी अंग्रेज के होटल में भी ठहरने की सुविधा न मिली। जब गांधी जी ने भारतीयों से मिलकर अपनी बातें बतायीं तब उन लोगों ने कहा कि यहां अपमान का घूंट पीकर ही पैसे कमाये जा सकते हैं।

गांधी जी गोरों के व्यवहार से ऊबकर भारत लौटने की बात सोचने लगे। परन्तु पुन: वे अपने कर्तव्य पर ध्यान देकर रुक गये। वे एक वर्ष का काम लेकर यहां आये थे। गांधी जी अपनी वकालत की सफलता इसमें मानते थे कि वादी तथा प्रतिवादी को कोर्ट के बाहर ही बैठाकर तथा समझा-बुझाकर मामला सुलझा दिया जाये और उन्होंने वहां यही किया भी। इस समझौता में दोनों पक्षों ने अपना सम्मान सुरक्षित समझा। गांधी जी ने जन-सेवा के साथ बीस वर्षों तक वकालत भी की, परन्तु उनका मुख्य काम तो वादी-प्रतिवादी को समझाकर उनमें सुलह कराना होता था। उन्होंने अपनी वकालत के दरम्यान कभी झूठ का आश्रय नहीं लिया।

वर्ष पूरा हुआ। गांधी जी भारत लौटने वाले थे। सेठ अब्दुल्ला तथा अन्य भारतीयों ने उनसे अफ्रीका रुकने की बात कही। उन्हें लगा कि अंग्रेजों के कुशासन को गांधी जी कम करा सकते हैं। तत्काल वहां की सरकार ने एक घोषणा की कि भारतीय लोग चुनाव में मत (वोट) नहीं दे सकते।

गांधी जी रुक गये। भारतीयों ने उनके निर्वाह का खर्चा उठाना चाहा। गांधी जी ने इसे नहीं स्वीकारा। उन्होंने कहा कि आप लोग मुकदमें का काम मुझे दें, उससे मेरा गुजर हो जायेगा। गांधी जी ने प्रवासी भारतीयों को संगठित किया। उन्होंने ''नेटाल इण्डियन कांग्रेस'' नाम से संस्था कायम की। भारतीयों का भी चुनाव में मतदान का अधिकार सुरक्षित हो, इसके लिए एक प्रार्थना-पत्र नेटाल-विधानसभा को भेजा गया, परन्तु सरकार ने उसकी उपेक्षा करके

विधेयक पास कर दिया। किन्तु अभी सम्राट की स्वीकृति बाकी थी। हजारों भारतीयों के हस्ताक्षर कराकर सम्राट के पास प्रार्थना-पत्र भेजा गया। सम्राट ने इस पर ध्यान दिया और विधेयक रुक गया। इससे भारतीयों को प्रसन्नता हुई। गांधी जी के नेतृत्व में भारतीयों ने अपना आंदोलन तथा समाज-सुधार के कार्यक्रम चलाया। गांधी जी ने सफाई, सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने प्रांतवाद, जातिवाद, संप्रदायवाद आदि का भेद मिटाकर सभी भारतीयों को संगठित रहने का बिगुल फूंका।

गांधी जी थोड़े समय के लिए 1896 में भारत आये। उन्होंने भारत के कांग्रेसी नेताओं—गोखले, तिलक, फिरोजशाह मेहता आदि से भेंट की, अफ्रीका में भारतीयों की दशा की पुस्तक छपवाकर बम्बई, मद्रास आदि में प्रचार किया, जगह-जगह भाषण दिये। उनके समाचार अखबारों में छपे। कलकत्ता के इंग्लिशमैन अखबार के अंग्रेज संपादक मि० सांडर्स गांधी जी की इन बातों से बहुत प्रभावित हुए कि वे अफ्रीका के अंग्रेजों की गलतियां बढ़ा-चढ़ाकर नहीं कहते थे। गांधी जी का मत था कि दूसरों को न्याय देकर ही हमें शीघ्र न्याय मिल सकता है।

जब गांधी जी कलकत्ता में थे अफ्रीका से उनको तार से बुलाया गया। वे तुरन्त जल-जहाज से अफ्रीका के लिए चल दिये। अबकी बार उनका परिवार भी साथ में था। उन्होंने भारत में अफ्रीका के लिए जो काम किया था उसकी विकृत व्याख्या अफ्रीका के गोरों ने की थी। अत: वे गांधी जी पर बहुत क्रुद्ध थे। वे जैसे जल-जहाज से उतरे, गोरों ने उन पर आक्रमण कर दिया। परन्तु पुलिस ने उनकी रक्षा की। यदि पुलिस उनकी रक्षा न करती तो वे मार डाले जाते। उनका परिवार सकुशल उनके मित्र रुस्तम के यहां पहुंच गया था। वे भी किसी प्रकार वहां पहुंचे। गोरों ने रुस्तम जी का घर घेर लिया और कहा कि यदि गांधी को नहीं देते हो तो तुम्हारे घर में आग लगा दी जायेगी। परन्तु पुलिस गांधी जी को भारतीय पुलिस की वर्दी पहनाकर उन्हें चुपके से मकान से निकाल ले गयी।

जब हलचल शांत हुई तब वहां के अधिकारियों ने गांधी जी से कहा कि यदि आप चाहें तो आक्रमणकारियों पर मुकदमा चलाया जाये। गांधी जी ने कहा—"मैंने यह निर्णय कर लिया है कि अपने आक्रमणकारियों पर मुकदमा नहीं चलाना है। मैं नहीं समझता कि उनकी कोई गलती है। जो कुछ उन्हें पता लगा था, वह अपने नेताओं से।....मैं अदालत से इसमें मदद नहीं चाहता।"[1] इसके बाद गांधी जी ने अफ्रीका के लिए जो काम भारत में किया था उसका

---

1. **कृपलानी कृत महात्मा गांधी, पृ० 15।**

दस्तावेज वहां के अधिकारियों एवं संवाददाताओं को दिखाया, तब अंग्रेज लोग केवल शांत ही नहीं हुए, किन्तु गांधी जी के मित्र हो गये।

गांधी जी की पत्नी, उनके दो बच्चे तथा एक इनकी बहिन साथ में थे। इन तीन बच्चों को पढ़ाना था। वे उन्हें न इसाई स्कूल में भेजना चाहते थे और न विदेशी भाषा के माध्यम से उनकी शिक्षा चाहते थे। अत: उन्होंने स्वयं उन्हें अपनी भाषा में शिक्षा देना शुरू किया। वे भारतीयों के समाज-सुधार का भी काम करते थे, और उनके राजनीतिक तथा सामाजिक स्तर उठाने का भी काम करते थे। परन्तु यह सब करने में उन्हें बड़ी कठिनाई उठानी पड़ती थी। कई बार जिनको वे उठाना चाहते थे उन्हीं से उपेक्षा पाते थे। उन्होंने कहा था— ''समाज का सुधार करने के लिए आतुर तो सुधारक होता है, परन्तु समाज नहीं।''

गांधी जी इस बार वकालत भी खूब जमकर करते थे। इसी बीच वहां की गोरी-सरकार एक युद्ध में फंस गयी। गांधी जी ने उसकी सेवा के लिए भारतीयों की एक संस्था बनायी और भारतीयों ने पीड़ित गोरों की सेवा की। इससे भारतीयों में संगठन बढ़ा तथा गोरों की दृष्टि में भारतीयों की इज्जत बढ़ गयी।

इसके बाद गांधी जी पुन: भारत लौटना चाहे। गांधी जी के मुवक्किलों एवं प्रशंसकों ने उन्हें बहुत उपहार दिये। कुछ तो खास कस्तूरबा को दिये। गांधी जी के मन में प्रश्न उठा कि क्या इनका मुझे व्यक्तिगत उपभोग करना चाहिए? इस उधेड़बुन में वे पूरी रात सो नहीं पाये। अन्तत: उन्होंने प्रात: यह निर्णय लिया कि इस धन का एक ट्रस्ट बना देना चाहिए जिससे यहां के समाज की सेवा हो। उन्होंने कस्तूरबा को भी समझाया और उनको व्यक्तिगत दिये गये उपहार भी ट्रस्ट को दे दिया गया। इसके बाद गांधी जी 1901 में भारत लौट आये और बम्बई में रहकर वकालत करने लगे।

वे कांग्रेस में तथा सार्वजनिक सेवा में जाने लगे। उस समय कांग्रेसी नेता वही थे जो अंग्रेजी जानते थे। वे वर्ष में केवल तीन दिन का अधिवेशन भारत के किसी कोने में कर लेते थे। अंग्रेजी में भाषणबाजी हो जाती थी। किसी में सेवाभाव नहीं रहता। सब स्वयंसेवकों को काम करने की बात कहते। सब एक दूसरे को हुक्म देते। भोजन भी कई लोगों के अलग-अलग पकते। अस्पृश्यता की भावना व्याप्त थी। गांधी जी जहां कांग्रेस में जाते विनम्रतापूर्वक काम करते थे। वे गुरुजनों के प्रति अति विनयी तथा मोटा काम करने में आगे रहते थे।

गांधी जी एक वर्ष के भीतर पुन: अफ्रीका से तार आने पर वहां चले गये। अबकी बार गांधीजी ने अफ्रीका में बड़ा आश्रम खोला जिसमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, यूरोपियन सभी एक समान रहते थे। उनमें बड़े-बूढ़े बच्चों के लिए

स्कूल चलाते थे। गांधी जी ने इसी आश्रम में अपनी सैंतीस (37) वर्ष की अवस्था में ब्रह्मचर्य व्रत लिया। यहां का नियम था कि कोई किसी से छुआछूत नहीं मानता था।

अफ्रीका की गोरी सरकार ने प्रवासी भारतीयों के लिए एक आज्ञा-पत्र निकाला जिनके सारे शब्द भारतीयों के लिए घृणा व्यंजक थे, जैसे—हर भारतीय नर या नारी तथा आठ वर्ष का बच्चा अपनी रजिस्टरी कराये और अपना नया प्रमाण-पत्र ले। उनके शरीर के मुख्य चिह्न लिखे जायेंगे। जो व्यक्ति यह काम नहीं करायेगा उसे दण्ड, कारावास तथा देश निकाला की सजा दी जा सकती है। बच्चों की ओर से उनके माता-पिता रजिस्ट्रार के सामने पेश होकर अंगूठे का निशान देंगे। रजिस्टरी का प्रमाण-पत्र पुलिस के मांगने पर दिखाना पड़ेगा। पुलिस जब चाहे भारतीयों के घर में घुसकर तलाशी ले सकती है। यह प्रमाण-पत्र उसे अपने कार्य क्षेत्र में साथ रखना पड़ेगा और मांगने पर दिखाना पड़ेगा।

गांधीजी ने कहा कि ऐसा घृणित कानून तो संसार के किसी देश में मेरी जानकारी में नहीं है। यदि यह कानून पास हो गया तो भारतीयों की दुर्गति हो जायेगी। अत: इसको लेकर 19.9.1906 में वहां बड़ी सभा हुई। सभा में तय किया गया कि इस कानून का विरोध किया जाये। यदि इस पर भी यह पास हो जाये तो इसे न माना जाये और इसके रास्ते में जो कठिनाई आये सहा जाये।

उपर्युक्त काला कानून पास हो गया। भारतीयों ने धरना दिया। वे गिरफ्तार कर जेल भेजे गये। गांधी जी भी दो महीने के लिए कारावास भेजे गये। गोरी सरकार ने भारतीयों के सामने यह प्रस्ताव रखा कि यदि वे स्वेच्छा से अपनी रजिस्ट्री करा लें तो उनके ऊपर से सारे काले कानून समाप्त कर दिये जायेंगे। गांधी जी अगले पर विश्वास करते थे। उन्होंने भारतीयों की एक बड़ी सभा में उन्हें समझाया कि वे रजिस्ट्री करवा लें। गांधी जी की इस राय को कुछ लोग नापसंद किये। एक पठान ने तो कहा कि यदि कोई अपना नाम रजिस्टर कराने जायेगा तो उसे मैं मार गिराऊंगा। गांधी जी ने सभा को समझाया कि हठ छोड़कर बात मान लेनी चाहिए। दूसरे दिन गांधी जी कुछ नेताओं के साथ रजिस्टरी ऑफिस को अपना नाम रजिस्टरी कराने जा रहे थे। उन्होंने अपना उदाहरण पहले इस काम में पेश करना चाहा। रास्ते में वह पठान मिला और यह जानकर कि अपना नाम रजिस्ट्री कराने जा रहे हैं, उसने गांधी पर लाठी से आक्रमण कर दिया। गांधी जी चोट खाकर 'हा राम' कहकर गिरे और मूर्छित हो गये। गांधी जी के मित्र पादरी डॉ० डॉक महोदय ने उन्हें अपने घर ले जाकर बड़ी सेवा की। पठान पकड़ा गया। सरकार ने उस पर मुकदमा चलाया। गांधी जी ने सरकार से अपील की कि मैं पठान पर मुकदमा नहीं

चलाना चाहता। मैं चाहता हूं कि उसे छोड़ दिया जाये, परन्तु सरकार ने कहा कि यह केवल गांधी जी का विषय नहीं है। पठान को तीन महीने की कड़ी सजा हुई। पीछे पठान ने अपनी गलती महसूस की और वह गांधी जी का मित्र हो गया।

गांधी जी को न समझकर एक पठान उन्हें एक सभा में मारने के लिए एक बार पुन: लाठी लेकर गया था, परन्तु रक्षकों ने सम्हाल लिया। गांधी जी के प्रयास से करीब सभी भारतीयों ने अपने नाम रजिस्टर्ड करा लिये। परन्तु सरकार ने अपने प्रण को मेट दिया और काला कानून बना दिया।

इसके बाद गांधी जी ने समस्त भारतीयों से कहा कि वे रजिस्टर्ड प्रमाण-पत्रों की होली जला दें। लोगों ने अपने प्रमाण-पत्र जला दिये। वहां की सरकार ने दमन शुरू किया। गांधी जी के नेतृत्व में भारतीयों ने सत्याग्रह किया और जेल गये। कस्तूरबा ने, जो गांधी जी की पत्नी थीं, नारियों का दल लेकर आन्दोलन किया, जेल गयीं, कष्ट सहीं।

इसी बीच संघीय रेलवे के गोरे कर्मचारियों ने अपनी मांगों को लेकर हड़ताल किया। गांधीजी ने देखा कि यहां की सरकार परेशानी में है, अत; उन्होंने अपना आन्दोलन रोक दिया। उन्होंने कहा "हम सरकार को कष्ट देकर उसकी कठिनाइयों से लाभ नहीं उठाना चाहते।" गांधी जी की इस उदात्तभावना से गोरे बहुत प्रभावित हुए। एक गोरे सचिव ने गांधी जी से विनोद में कहा—

"मैं भारतीयों को बिलकुल पसंद नहीं करता और उनकी सहायता करने की भी बिलकुल परवाह नहीं करता। परन्तु मैं क्या करूं, आप वक्त जरूरत पर हमारी मदद करते हैं। आप पर हम कैसे हाथ छोड़ सकते हैं। कई बार हम सोचते हैं कि अच्छा हो कि अंग्रेज हड़तालियों की तरह आप भी हिंसा अपना लें, क्योंकि तब हम फौरन जान जायेंगे कि आप को कैसे खत्म कर दिया जाये। परन्तु आप तो शत्रु को भी चोट नहीं पहुंचायेंगे। आप स्वयं कष्ट सहकर विजय की कामना करते हैं और आपने अपने ऊपर स्वयं ही शिष्टाचार तथा सभ्यता का जो अनुशासन लगाया है उससे कभी नहीं हटते। इससे हम बिलकुल निरुपाय हो जाते हैं।"[1]

इसके बाद वहां की सरकार द्वारा भारतीय-प्रवासियों पर लगाये गये सारे प्रतिबंध हटा लिये गये और गांधी जी ने 18 जुलाई, 1914 ई० को अफ्रीका सदैव के लिए छोड़ दिया।

8. भारत में

गांधी जी पहले इंग्लैण्ड गये। गोखले जी इंग्लैण्ड में थे। गांधी जी उनसे

---

1. **कृपलानी कृत महात्मा गांधी, पृ० 50।**

मिलना चाहते थे। गोखले जी इंग्लैण्ड से गांधी जी के सहयोग में एक बार अफ्रीका आये थे। गांधी जी गोखले जी को ही अपना राजनीतिक-गुरु कहते थे। गांधी जी गोखले जी से मिलकर बंबई लौट आये। उसके बाद पोरबंदर आकर शान्तिनिकेतन चले गये जो रवींद्रनाथ टैगोर का शिक्षण संस्थान था। इधर गोखले की मृत्यु हो गयी। गोखले जी ने गांधी जी को राय दी थी कि तुम भारत का पूरा भ्रमण करके उसे ठीक से जान लो, तब राजनीति में प्रवेश करो। गांधी जी ने यही किया।

९. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का शिलान्यास

पण्डित मदनमोहन मालवीय जी ने 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' का शिलान्यास करने का उत्सव किया। शिलान्यास करने वाले थे तत्कालीन भारत के वाइसराय लार्ड हार्डिज। इसमें गांधी जी, एनीबेसेण्ट आदि भी आमंत्रित थे। सभा के अध्यक्ष थे दरभंगा के महाराजा। वाइसराय तो शिलान्यास करके चले गये, सभा की कार्यवाई चलती रही।

इस सभा में जब गांधी जी ने अपना भाषण आरम्भ किया तब उन्होंने पहली बात यह कही कि काशी में स्थित विश्वनाथ-मंदिर की गली बहुत सकरी है। उस पर ध्यान देना चाहिए। दूसरी बात में अपना दुख यह प्रकट किया कि सभा की सारी कार्रवाई इंग्लिश में हुई। वस्तुत: हिन्दी में होना चाहिए था। इसके बाद उन्होंने कहा कि महाराजा ने तथा अन्य राजे-महाराजे एवं विद्वानों ने भारत की गरीबी की बहुत चर्चा की, परन्तु यहां सभा में क्या देखा जा रहा है—शानदार तमाशा, रत्नों एवं आभूषणों का ऐसा प्रदर्शन कि पेरिस का जौहरी भी चौधियां जाये। आभूषणों से लदे ये बड़ी जाति के कहलाने वाले लोगों की तुलना जब मैं गरीबों से करता हूं तो कहने की इच्छा होती है कि भारत का तब तक उद्धार नहीं होगा जब तक आप लोग इसे उतारकर देशवासियों की थाती रूप में उन्हें नहीं लौटाते। "महाशय, जब कभी मैं भारत की किसी महानगरी में एक विशाल महल के निर्माण की बात सुनता हूं, तो मुझे फौरन ईर्ष्या होती है और मैं कहता हूं, अच्छा, यह तो वही रुपया है जो किसानों से आया है।"[1]

गांधी जी ने वाइसराय की सुरक्षा में पूरे बनारस में फैले सिपाहियों की व्यवस्था की निंदा की जिससे शहर की घेराबंदी जैसी कर दी गयी थी। इसके बाद भारत के क्रांतिकारियों की देशभक्ति की प्रशंसा करते हुए उनके हिंसात्मक गतिविधि की आलोचना की। इसे सुनकर एनीबेसेण्ट ने चिल्लाकर कहा "कृपया इसे बंद कीजिए" परन्तु गांधी जी बोलते रहे।

---

1. **तेंदुलकर, महात्मा, खण्ड 1, पृ० 223।**

परिणाम यह हुआ कि दरभंगा महाराजा, एनीबेसेण्ट तथा कई राजे-महाराजे सभा से उठकर चल दिये। पुलिस कमिश्नर ने रात में गाधी को बनारस छोड़कर चले जाने का निर्देश दिया। मालवीय जी के हस्तक्षेप से कमिश्नर मान गया, परन्तु गांधी जी प्रात:काल स्वयं बनारस से चले गये।

10. हिन्दुस्तानी भाषण

गांधीजी ने लखनऊ में कांग्रेस के मंच से जब बोलना शुरू किया तो वे अपनी टूटी-फूटी भाषा में हिन्दुस्तानी (सरल हिन्दी) में भाषण देने लगे। अध्यक्ष ने संकेत किया कि वे इंग्लिश में बोलें, परंतु गांधी जी हिन्दुस्तानी में ही बोलते गये तथा उन्होंने कहा कि मैं अपने श्रोताओं को एक वर्ष देता हूं कि वे हिन्दुस्तानी सीख लें। मैं अब कांग्रेस के मंच से कभी इंग्लिश में नहीं बोलूंगा।

गांधीजी की मातृ-भाषा गुजराती थी और पढ़ाई इंग्लिश में, परन्तु वे जानते थे कि भारत की राष्ट्रीय भाषा हिन्दी ही हो सकती है और भारत की अनेक भाषाओं के बीच सम्पर्क-भाषा होने में हिन्दी ही समर्थ है। वाइसराय ने जब एक सम्मेलन में गांधी जी को बुलाया, तो उन्होंने उसमें हिन्दी में भाषण दिया जो वाइसराय के सामने पहली घटना थी।

11. चंपारन (पश्चिमोत्तर बिहार)

चम्पारन क्षेत्र में अंग्रेज लोग रहते थे। उन्होंने बेतिया के राजा को बातचीत में खुश करके बहुत थोड़ी लगान में बहुत बड़ा भूखण्ड ले लिया था। उसे वे किसानों को लगान पर देते थे और उसमें नील की खेती करने के लिए प्रतिबंधित करते थे। नील पैदा करने में बड़ी मेहनत लगती थी और उस नील को गोरे थोड़े दाम में लेकर इंग्लैण्ड भेजते थे। वहां उन्हें काफी दाम मिलता था।

ये गोरे अंग्रेज किसानों से समय-समय नाजायज रुपये वसूलते थे। इनके कारिंदे गुस्से में किसानों के गांव लूटते थे, स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार करते थे, खड़ी फसल नष्ट करते थे। इन गोरों के सामने कोई भारतीय घोड़े पर नहीं बैठ सकता था, छाता नहीं लगा सकता था। उच्च शिक्षा प्राप्त भारतीय भी इन गोरों के दरवाजों पर घंटों प्रतीक्षा के बाद उनसे मिल सकता था, परंतु गोरों के बैठकखाने में वह बैठ नहीं सकता था। किसानों की कोई सुनने वाला नहीं था; क्योंकि बड़े अफसर सब अंग्रेज थे।

चम्पारन के किसान 'राजकुमार शुक्ल' ने गांधीजी से लखनऊ में चम्पारन के किसानों की विपत्ति बतायी। गांधी जी कुछ दिन में अवसर निकालकर पहले पटना पहुंचे। राजेन्द्र बाबू के घर गये। वे पुरी गये थे। उनके मुंशी ने गांधी जी को घर में प्रवेश नहीं करने दिया। छूत के डर से उन्हें कुएं से पानी नहीं लेने

दिया। गांधी जी मुजफ्फरपुर गये। कृपलानी जी वहां के कालेज में प्रोफेसर थे। उन्होंने प्रिंसिपल से गांधी जी को ठहराने की बात कही। वह अंग्रेज था। उसने इन्कार कर दिया।

वहां के अंग्रेज कमिश्नर ने गांधीजी को धमकाया और कहा कि वे मुजफ्फरपुर शीघ्र छोड़कर चले जायें। गांधीजी ने कहा कि भारत हमारा देश है। हम इसमें कहीं भी रह तथा काम कर सकते हैं। हम चम्पारन अवश्य जायेंगे। गांधी जी चम्पारन पहुंचे। वे गांवों में जाकर किसानों की दशा देखना चाहते थे। जिला मजिस्ट्रेट ने नोटिस जारी की कि गांधी जी चौबीस घण्टे में चम्पारन छोड़कर चले जायें। गांधीजी ने मजिस्ट्रेट को पत्र लिखा कि मैं जो काम करने के लिए आया हूं वह करके ही जाऊंगा। मजिस्ट्रेट ने उनके नाम सम्मन भेजा कि वे अदालत में हाजिर हों।

गांधीजी अदालत में हाजिर हुए। सरकारी वकील ने यह सिद्ध करना चाहा कि गांधी जी ने सरकारी आज्ञा का उल्लंघन करके अपराध किया है। मजिस्ट्रेट और सरकारी वकील समझते थे कि गांधी जी को इसका उत्तर देना पड़ेगा। देखते हैं कि वे अपने आप को कैसे निर्दोष सिद्ध करते हैं। परन्तु बात उलटी हुई। गांधी जी ने कहा कि मैं सरकार की आज्ञा का आदर करता हूं। मैंने आज्ञा भंग की है इसलिए मैं दोषी हूं। मुझे जो दण्ड देना हो दें; परन्तु मैं जिन पीड़ित भाइयों की सेवा में आया हूं उसे बिना किये यहां से नहीं जा सकता; क्योंकि यह पुनीत कर्तव्य है।

मजिस्ट्रेट गांधीजी की उक्त बातें सुनकर दंग रह गया। ऐसा आदमी उसे देखने-सुनने को कभी नहीं मिला था जो अपने बचाव के लिए कोई सफाई न देकर केवल अपने कर्तव्य पर दृढ़ हो।

इधर अंग्रेज सरकार चम्पारन की इस घटना से परिचित हो गयी थी। गांधीजी ने भी इस बात को तार द्वारा वाइसराय, मालवीय जी तथा पटना अपने मित्रों को सूचित कर दिया। गांधी जी के वक्तव्य का प्रचार समाचार-पत्रों द्वारा भारत भर में हुआ। चम्पारन के किसान पुलिस का डर छोड़कर शहर में आने लगे। जो पीड़ित मानवता के लिए स्वेच्छा से कारावास में जाना चाहता हो ऐसे अद्वितीय पुरुष के दर्शन के लिए क्षेत्र के लोग उमड़ पड़े।

सरकार डर गयी। उसने सोचा कि यदि गांधी जी को जेल भेजा गया तो हम भारत ही में नहीं, पूरे संसार में बदनाम हो जायेंगे। अतएव गांधीजी को स्वतंत्र छोड़ दिया गया।

गांधी जी चम्पारन के गांवों में गये। वहां अपनी शिकायत लिखाने तथा उनके दर्शन करने के लिए भीड़ उमड़ पड़ती थी।

गांधीजी के सहयोग के लिए अनेक भारतीय वकील तथा नेता उनके पास आ गये। उच्च श्रेणी के नेताओं के पास उनकी सेवा के लए नौकर रहते थे। गांधीजी ने कहा कि सभी नेता अपने नौकर घर भेज दें और यहां का सारा काम स्वयं मिल-जुलकर करें। गांधीजी ने अहमदाबाद, साबरमती आश्रम से कस्तूरबा को बुला लिया। उन्हें भोजन-भंडार का काम सौंप दिया। गांधी जी के पास एक बड़ा समाज बन गया। गांधी जी ने केवल निलहे गोरों से ही वहां की जनता को नहीं छुड़ाया, किन्तु गांव की सफाई में काम किया। जो कार्यकर्ता पढ़ाने लायक थे, उन्हें गांव के बच्चों को पढ़ाने में लगाया। गांधी जी चाहे शान्ति-निकेतन गये, चाहे अन्य जगह, वे सफाई, शिक्षा, स्वास्थ्य सभी सामाजिक कामों पर कार्रवाई करते थे।

यहां नेता, वकील तथा सामान्य लोग सब काम अपने हाथों करते थे। एक दिन गांधी जी को अपना संदेश-पत्र जिला-मजिस्ट्रेट को भेजना था। यह काम अनुग्रह बाबू तथा कृपलानी जी को सौंपा गया। आगे यही अनुग्रह बाबू मुख्यमंत्री हुए थे। तो अनुग्रह बाबू एवं कृपलानी जी गांधी जी का पत्र लेकर मजिस्ट्रेट के पास गये। वहां के नौकरों ने उनसे पूछा कि आप लोग अंग्रेजी भी जानते हैं? उन लोगों ने नम्रता से कहा ''कुछ टूटी-फूटी''। इतने में एक चपरासी जो उन्हें जानता था उसने कहा—अरे, ऐसा क्यों पूछते हो, ये सब 'एल्ला-बेल्ला'' (एल०एल० बी०) हैं।

गांधीजी का अभियान सफल हुआ। किसान स्वतन्त्र हुए और निलहे गोरे एक वर्ष के भीतर बोरिया-बिस्तर समेटकर इंग्लैण्ड चले गये।

गांधीजी इस समय धोती और कुर्ता पहनते थे, गोरे लोगों ने अपने समाचार पत्रों में इसकी खिल्ली उड़ाई। गांधी जी ने उत्तर दिया—

''मैं चम्पारन में जो पोशाक पहनता हूं उसे भारत में सदा पहनता रहा हूं। श्री इरविन के पत्र की यह ध्वनि है कि मैं चम्पारन में काश्तकारों पर असर डालने के लिए उनके सम्मुख ऐसी पोशाक पहनकर जाता हूं और इसका उपयोग मैं अस्थायी तथा विशेष रूप से चम्पारन में ही करता हूं। तथ्य यह है कि मैं राष्ट्रीय पोशाक इसलिए पहनता हूं कि एक भारतीय के लिए यह अत्यन्त स्वाभाविक और शोभनीय है। मेरा विश्वास है कि यूरोपीय पोशाक की नकल करना हमारे पतन, अपमान और दुर्बलता का चिह्न है और हम अपनी इस राष्ट्रीय पोशाक को छोड़कर राष्ट्रीय पाप कर रहे हैं। भारतीय आबहवा के अनुकूल होने के साथ-साथ यह सादगी, कला और सस्तेपन में दुनिया में अपना सानी नहीं रखती....यदि अंग्रेजों में झूठा घमण्ड और गौरव के झूठे भाव न होते तो उन्होंने भारत में यहां की पोशाक को बहुत पहले ही अपना लिया होता। साथ ही मैं यह भी कहना चाहता हूं कि चम्पारन में मैं नंगे पैर नहीं

जाता। जूते तो मैं धार्मिक कारणों से नहीं पहनता, किन्तु मैं यह भी देखता हूं कि यथासम्भव उन्हें न पहनना अधिक स्वाभाविक और स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है।''[1]

गांधीजी को चम्पारन से ही लोग महात्मा कहने लगे। इस समय उनकी अवस्था सैंतालीस (47) वर्ष की थी।

12. जलियांवाला बाग

गोरी सरकार भारतीयों पर अनेक काले कानून पास करने वाली थी। इसका कांग्रेसियों ने देश भर में हड़ताल एवं शांति जुलूस से विरोध किया। सरकार उनका दमन करने लगी। पंजाब में भयंकर कांड हुआ। अमृतसर में जलियांवाला बाग में एक विराट सम्मेलन हुआ। इसमें करीब बीस हजार स्त्री, पुरुष और बच्चे इकट्ठे हुए। चारों तरफ से बहुमंजिले मकान थे। उस मैदान में जाने का एक संकीर्ण मार्ग था। इस मार्ग पर जनरल 'डायर' की आज्ञा से सोलह सौ (1600) राउण्ड गोलियां बरसायी गयीं। इसमें सैकड़ों नर, नारी तथा बच्चे मारे गये तथा सैकड़ों घायल हुए। गांधी जी इस घटना को सुनकर हतप्रभ हो गये। यह घटना 13 अप्रैल, 1919 ई० को हुई।

13. असहयोग आन्दोलन

गांधीजी ने असहयोग आंदोलन की घोषणा की। इसमें भारतवासियों को आदेश था कि सरकार के दिये हुए उपाधियों को वापस कर दें, सरकारी संस्थाओं से त्यागपत्र दे दें, सरकारी समारोहों का बहिष्कार करें, विद्यार्थी विद्यालयों तथा वकील अदालतों का बहिष्कार करें, सदस्य विधानसभाओं का बहिष्कार करें, विदेशी सामानों का बहिष्कार करें, सरकार को कर न दें, इसके साथ भारतीय लोग सांप्रदायिक एकता, अछूतोद्धार, खादी, स्वदेशी ग्रामोद्योग, ग्रामीणविकास, राष्ट्रीय शिक्षा, मद्य-निषेध, ग्राम पंचायतों का संघटन आदि रचनात्मक काम करें।

भारत भर में आंदोलन शुरू हुआ। यह घटना 1920 ई० की है। हजारों विद्यार्थी एवं वकीलों ने स्कूल तथा अदालत छोड़कर कांग्रेस का साथ दिया। सरकार द्वारा दमनचक्र शुरू हुआ। करीब बीस हजार आंदोलनकर्ता जेल में डाल दिये गये। गांधीजी पर मुकदमा चला। फैसले के समय अंग्रेज न्यायाधीश ने गांधीजी की बहुत प्रशंसा की, परन्तु उसने उनको छह वर्ष की कड़ी सजा एवं कारावास सुनाया। परन्तु गांधी जी 5 फरवरी, 1924 को जेल से छोड़ दिये गये। वे इस समय दो वर्ष जेल में रहे।

---

1. **कृपलानी कृत महात्मा गांधी, पृष्ठ 67-68।**

14. विदेशी वस्त्रों की होली

गांधीजी ने विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार करने का आह्वान किया और साथ-साथ उसे जलाने का भी। उन्होंने कलकत्ता में अभियान चलाया। लोग उनके आदेशों पर विदेशी वस्त्रों को इकट्ठा कर जलाने लगे। सरकार परेशान हुई।

15. नमक-सत्याग्रह

सरकार का नमक पर काला कानून था। गांधीजी ने इसे तोड़ने के लिए सत्याग्रह करने की ठानी। उन्होंने सरकार को इसका सन्देश दे दिया। चौहत्तर (74) चुनित कार्यकर्ताओं को साथ लेकर गांधी जी ने साबरमती (अहमदाबाद) आश्रम से 12 मार्च, 1930 ई० को प्रस्थान किया। पद-यात्रा थी। रास्ता 385 किलोमीटर था, तब जाकर समुद्र तट पर पहुंचना था। रास्ते में जनता उनके साथ होती गयी। इस क्रम में चार सौ गांव के मुखिया अपने पद को त्यागकर उसमें मिल गये। मार्ग में श्रीमती सरोजनी नायडू भी सम्मिलित हो गयीं। 5 अप्रैल को वे सब समुद्र तट पर पहुंचे। 6 अप्रैल को गांधी जी ने समुद्र तट पर नमक हाथ में उठाया जिसके लिए प्रतिबंध था। वे वहां दलबल सहित 4 मई तक काम करते रहे। वे 4 मई को आधीरात को पकड़ लिये गये और पूना के यरवडा जेल में ले जाकर बन्द कर दिये गये।

देश के विभिन्न क्षेत्रों में आंदोलन हुए। पुलिस ने दमन किया, गोलिया चलायी। लोग मारे गये और करीब एक लाख सत्याग्रही जेल में बन्द कर दिये गये। वल्लभभाई पटेल, सरोजनी नायडू, जयराम दास दौलतराम, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू आदि सब जेल में थे।

मोतीलाल नेहरू बीमार होने से नमक सत्याग्रह में नहीं सम्मिलित हो सके थे। इसलिए उन्होंने अपने घर पर एक स्प्रिटलैम्प के ऊपर एक शीशी की नली में नमक बनाकर कानून भंग किया था। वे भी जेल में डाल दिये गये थे। परन्तु वे ज्यादा बीमार हो गये। सरकार ने उन्हें छोड़ दिया। वे लखनऊ चिकित्सा के लिए लाये गये और 6 फरवरी, 1931 को उनका शरीरांत हो गया। कुछ दिनों के बाद गांधी जी तथा अन्य लोग भी छोड़ दिये गये।

16. पुनः आन्दोलन तथा कारावास

अंग्रेज सरकार भारतीयों का दमन करने में लगी थी। गांधी जी ने पुन: 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' शुरू किया। गांधी जी का आन्दोलन द्वेषरहित तथा अहिंसात्मक होता था। वे पुन: गिरफ्तार कर यरवडा जेल में डाल दिये गये। सरदार पटेल, जवाहरलाल नेहरू आदि सारे नेता गिरफ्तार कर लिये गये। जवाहरलाल नेहरू की माता स्वरूपरानी जुलूस के साथ थीं। उनके सिर पर पुलिस की लाठी पड़ी। कस्तूरबा गिरफ्तार कर ली गयीं और बत्तीस हजार लोग जेल में डाल दिये गये।

17. हिन्दुओं की एकता के लिए घोर तप

17 अगस्त, 1932 ई० को अंग्रेज सरकार ने घोषणा की कि भारत में सम्प्रदायों का अलग निर्वाचन होगा। इसके साथ हिन्दुओं में अछूतों को अलग निर्वाचन का अधिकार दिया जायेगा। गांधी जी ने इसका विरोध किया। उन्होंने कहा कि सम्प्रदाय के आधार पर निर्वाचन एकदम गलत है। परन्तु अछूत कहे जाने वाले बन्धुओं को हिन्दुओं से काटकर अलग निर्वाचन का अधिकार देना हम बिलकुल नहीं सहेंगे। इससे अछूतत्व और पक्का हो जायेगा। गांधी जी ने इसके विरोध में आमरण अनशन करने की घोषणा की। इंग्लैण्ड में इसकी प्रतिक्रिया हुई कि गांधी जी दबाव डालकर राजनीतिक लाभ लेना चाहते हैं। गांधी जी ने कहा कि मेरा अनशन अंग्रेजों को दबाने के लिए नहीं, किन्तु हिन्दुओं को जगाने के लिए है।

जब गांधी जी अफ्रीका में थे तथा कांग्रेस से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था, तभी अर्थात सन् 1909 ई० में ही ब्रिटिश शासन ने मुसलमानों के अलग निर्वाचन अधिकार का वातावरण बना दिया और 1917 ई० में कांग्रेस-लीग ऐक्ट में उन्हें अलग निर्वाचन अधिकार मिल गया था। यह सब लोकमान्य तिलक के कार्यकाल में हुआ था। इसी प्रकार डॉ० भीमराव अम्बेडकर चाहते थे कि अछूत कहे जाने वाले लोगों का अलग निर्वाचन अधिकार हो। इसमें कोई डॉ० अम्बेडकर को दोषी ठहरा सकता है कि जैसे जिन्ना भारत को तोड़कर पाकिस्तान बनाना चाहते थे, वैसे अम्बेडकर भारत को तोड़कर अछूतिस्तान बनाना चाहते थे। परन्तु जब हम डॉ० अम्बेडकर के दिल में बैठकर सोचें तब कुछ अन्य ही विचार उदय होगा। किसी अपनी मानी हुई परम्परा में रहकर क्या लाभ है जहां सदैव पशु से भी अधिक तिरस्कृत होकर रहना पड़े। जब हिन्दू नामधारी अपने ही एक वर्ग को अछूत मानकर उसकी हर बात में उपेक्षा करता है तब वह हिन्दुओं में क्यों बना रहे। डॉ० अम्बेडकर ने अछूत कहे जाने वाले लोगों का अलग निर्वाचन अधिकार मांगकर हिन्दुओं को जोर से झकझोर दिया। गांधीजी इस बात को ज्यादा समझते थे इसलिए वे सर्वाधिक पीड़ित हो गये। अंग्रेज तो चाहते ही थे कि हम भारत को जितना बन सके अधिक टुकड़े-टुकड़े करके तथा उसे दुर्बल बनाकर इंग्लैण्ड जायें।

गांधी जी ने कहा कि मैं अंग्रेजों की यह चाल नहीं चलने दूंगा। कम-से-कम जो हिन्दू हैं, किन्तु भूल से अछूत कहे जाते हैं उनको मैं हिन्दू से अलग नहीं होने दूंगा। अछूत भावना तो सवर्णों का दिया हुआ पाप है। इसको उन्हें धोना है। गांधी जी अपने कैशोर से ही छुआछूत नहीं मानते थे, अब इसको लेकर इनका मन काफी मथ उठा।

गांधीजी ने यरवडा जेल में ही 20 सितम्बर, 1932 ई० से अनशन शुरू कर दिया। राजेंद्रबाबू, राजा जी आदि कई नेता जेल से अभी बाहर थे। उन्होंने सवर्ण कहे जाने वाले हिन्दुओं से अपील की कि वे अपने मंदिर अछूत कहे जाने वाले बंधुओं के लिए खोल दें और छुआछूत का कलंक हिन्दू-समाज से धो देने का प्राणपण से प्रयत्न करें। अछूतों के एक नेता ए० जी० राजा थे। उन्होंने डॉ० अम्बेडकर के नेतृत्व को अस्वीकार कर दिया और सम्प्रदाय तथा जाति के नाम पर लिए हुए निर्णय की निन्दा की।

इलाहाबाद, वाराणसी, कलकत्ता और देशी रियासतों के सैकड़ों मंदिर अछूत कहे जाने वाले भाइयों के लिए खोल दिये गये। जगह-जगह सवर्ण कहे जाने वाले लोगों का अछूत कहे जाने वाले लोगों के साथ समारोह, सहभोज होने लगे। गांधीजी के अनशन ने भारत के सवर्ण कहे जाने वाले लोगों को हिला दिया। साथ-साथ दूसरे वर्ग के लोग तथा गोरी सरकार भी स्तम्भित रह गयी।

डॉ० अम्बेडकर भी हिन्दू-हृदय के थे, देशभक्त थे। वे देश को तोड़ना नहीं चाहते थे, केवल दलितवर्ग का अधिकार उसे दिलाना चाहते थे। अन्तत: गांधी-अम्बेडकर समझौता हुआ और दलितवर्ग के लिए विधानसभाओं में 147 सीटें सुरक्षित कर दी गयीं। 25 सितम्बर को समझौता हुआ और 26 सितम्बर को लंदन और दिल्ली में सरकार ने इसकी स्वीकृति दे दी। गांधी जी ने उसी दिन अपना अनशन समाप्त कर दिया। गांधीजी की इस सफलता पर जवाहरलाल नेहरू ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। ''कैसा जादूगर है! मैंने सोचा था कि यह यरवडा जेल में बैठा एक लघु मानव है। और उसे कितनी कुशल जानकारी इस बात की थी कि किस तरह लोगों की हृदयतंत्री के तार बजाये जाते हैं।[1]

18. हरिजन आंदोलन

गांधीजी ने इस घटना के बाद अछूत कहे जाने वलो बंधुओं को 'हरिजन' कहना आरम्भ किया। उन्होंने कारावास में रहते हुए भी हरिजनों के उद्धार के लिए बड़े जोरों से काम शुरू कर दिया। उन्होंने इसके लिए एक संस्था बनायी जिसका अध्यक्ष घनश्यामदास बिड़ला थे और मंत्री ठक्कर बापा। गांधीजी ने कहा कि मैं अस्पृश्यता का समूल नाश करने के लिए कटिबद्ध हूं। उन्होंने कहा कि हिन्दू समाज के मूल ग्रन्थों में कहीं भी छूआछूत की बात नहीं है। कवींद्र रवींद्रनाथ ठाकुर ने गांधीजी का जोरदार समर्थन किया। कांग्रेस के सभी नेता एवं तथाकथित सवर्णों में अगणित लोग गांधी जी का साथ दिये। भारत भर में

---

1. **कृपलानी कृत महात्मा गांधी, पृष्ठ 152।**

अछूतत्व को मिटाने के लिए अभियान चलने लगा। 'अस्पृश्यता निवारण सप्ताह' पूरे भारत में मनाया गया। इससे संकुचित हृदय के ज्ञानहीन हिन्दू क्रोध से आगबबूला हो गये। गांधी जी ने फरवरी 1933 ई० से 'हरिजन' नाम का पत्र निकालना आरम्भ किया, जिससे अस्पृश्यता-निवारण आंदोलन में बल मिला।

गांधी जी चाहते थे कि हरिजनों को नागरिक एवं सामाजिक अधिकार मिलने के साथ-साथ उनका मंदिरों में भी प्रवेश हो। डॉ० अम्बेडकर तथा समाजवादी नेता उनके मंदिर प्रवेश को उतना महत्त्व नहीं देते थे। वे चाहते थे कि उनकी नागरिक तथा सामाजिक योग्यताएं बढ़ाई जायें। परन्तु गांधी जी समझते थे हरिजनों के मंदिर प्रवेश से उन्हें आत्मबल मिलेगा।

छुआछूत के जिस महापाप को बुद्ध, महावीर, कबीर, नानक आदि ने ढाई हजार वर्षों से काटने का प्रयत्न किया है, वह गांधी जी के समय तक भी बहुत जड़दार था। उन्होंने इसकी भयंकरता समझी और हिन्दुओं की अन्तरात्मा को जगाने के लिए 8.5.1933 को इक्कीस (21) दिन का अनशन घोषित कर दिया। परन्तु वे उसी दिन जेल से छोड़ दिये गये। उन्होंने जेल से निकलकर लेडी 'थैकरसे' की पर्णकुटी में इक्कीस दिन का अनशन पूरा किया।

जातिगत छुआछूत की भावना से पैदा हुए पाप को गांधी और अंबेडकर ने समाप्त करने का प्रयास किया। इसके लिए गांधी जी ने अपनी तपस्या से सवर्ण कहे जाने वाले लोगों में विवेक एवं उदारता पैदा किया और अम्बेडकर ने दलितवर्ग में उनका स्वाभिमान जगाया, जिससे वे अपना महत्त्व समझ सकें। ये दोनों महापुरुषों के काम एक दूसरे के पूरक हैं।

19. हरिजन आंदोलन में दौरा

गांधीजी साबरमती आश्रम (अहमदाबाद) आ गये। सेठ जमनालाल बजाज का आग्रह था कि गांधी जी वर्धा चलें। अत: गांधी जी साबरमती आश्रम 'हरिजन सेवक संघ' को देकर वर्धा आ गये और वहां सेगांव नाम के गांव में आश्रम स्थापित किया और उसे सेवाग्राम नाम दिया। इसके बाद वे भारत भर में हरिजन-उद्धार के लिए दौरा करने लगे। डॉ० अम्बेडकर के अनुगामी गांधीजी की यह मानकर आलोचना करते थे कि वे हमें (दलितों को) सवर्ण हिन्दुओं का दास बनाकर रखना चाहते हैं, और संकुचित विचार के सवर्ण हिन्दू नामधारी गांधी को यह मानकर गाली देते थे कि वे हिन्दू-धर्म का नाश कर रहे हैं। इस प्रकार गांधी जी पर दोनों तरफ से पथरझोर पड़ रहा था। संकीर्ण मन के हिन्दुओं ने गांधीजी को जगह-जगह काले झण्डे दिखाये। उनकी सभाओं के वातावरण खराब करने की चेष्टा की, समाचार-पत्रों में विवाद उठाया। यहां तक कि पूना की तरफ उन पर बम फेंका गया, परन्तु वे बच

गये। उनके कुछ साथी घायल हो गये। गांधी जी ने कहा—"मैं शहीद होने के लिए लालायित नहीं हूं, परन्तु यदि उस धर्म की रक्षा के कर्तव्य-पालन में, जो करोड़ों हिन्दू भाइयों की तरह मेरा धर्म है, यह मुझे प्राप्त होना है, तो मैं सचमुच इस पद का अधिकारी होऊंगा।"[1]

20. बिहार का भयंकर भूकम्प

15 जनवरी, 1934 ई० को उत्तर बिहार में भयंकर भूकंप आया, जिसमें 77, 700 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्रफल प्रभावित हुआ। इस क्षेत्रफल में डेढ़ करोड़ आदमी बसते थे। इस भूकम्प में जमीन ऐसी फटी कि साठ (60) मीटर लम्बी तथा दस (10) मीटर गहरी तक दरारें पड़ गयीं। जमीन की उथल-पुथल से कई जगह धरती के भीतर की बालू ऊपर आकर ढेर बन गयी, कुआं-तालाब, बालू से पट गये। हजारों एकड़ जमीन खेती लायक नहीं रह गयी। दस लाख मकान नष्ट हो गये और हजारों लोगों की जानें गयीं। डेढ़ हजार किलोमीटर लम्बी रेल की पटरियां मुड़कर विचित्र स्थिति में हो गयीं।

इस भयंकर भूकंप से वहां की जनता बेहाल हो गयी। बाहर के लोग स्तंभित रह गये। सरकार भी किकर्तव्यविमूढ़ हो गयी। राजेन्द्र बाबू जेल में थे। सरकार ने उन्हें छोड़ दिया, जिससे वे पीड़ित उत्तर बिहार की सेवा कर सकें। गांधीजी पीड़ितों के लिए धन बटोरने लगे और मार्च 1934 में बिहार पहुंचे। गांधीजी इस समय अछूतोद्धार की भावना से ज्यादा प्रभावित थे, अत: उन्होंने भावना में आकर एक भावुक स्टेटमेंट दे डाला—"यह भूकंप अछूत कहे जाने वाले लोगों के प्रति किये गये पाप का प्रतिशोध है।" इसकी प्रतिक्रिया में शिक्षित समुदाय एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी अपने-अपने वक्तव्य दिये। उन्होंने कहा कि यह प्रकृति की कारण-कार्य-व्यवस्था की व्याख्या के विपरीत अन्धविश्वास एवं अविवेक को बढ़ावा देना है। और फिर छूआछूत के पाप के फल को भोगने के उत्तराधिकारी एकमात्र उत्तरी बिहार के लोग ही नहीं थे जिसमें कि बेचारे तथाकथित अछूत भी थे।

गांधीजी प्रभावित क्षेत्र का दौरा करके सेवा का काम करते थे और छुआछूत छोड़ने की राय देते थे। उनके दर्शन करके जनता को शान्ति मिलती थी। वे जहां जाते थे वहां जनता उमड़ पड़ती थी। सब लोग उनके चरणों तक नहीं पहुंचते थे। इसलिए लोगों ने उनके चरण-स्पर्श का एक विचित्र तरीका भी निकाला। लोग दूर से भीड़ के पैरों के बीच में अपनी लाठी डालकर गांधीजी के पैरों में छुआते थे। इससे वे मान लेते थे कि हमने उनके चरण-स्पर्श कर लिए। इससे गांधीजी के पैर छिल जाते थे।

---

1. **वही, पृष्ठ 158।**

21. अहिंसात्मक आंदोलन तथा जनजागरण

गांधीजी तथा राजनीतिक नेतागण अनेक बार जेल गये, सताये गये और प्रताड़ित किये गये, परन्तु वे अपना आन्दोलन अहिंसात्मक ढंग से चलाते रहे। जब विलायत की अंग्रेज सरकार यूरोप के युद्ध में फंस गयी थी तब गांधी जी ने अपना आंदोलन छोड़कर सरकार की सहायता की थी। गांधीजी कहते थे कि हमें भारत को स्वतन्त्र कराना है, अंग्रेजों को कष्ट नहीं देना है। वे सदैव अहिंसा पर जोर देते थे। इसलिए जो अपने आप को गांधी का शत्रु मानते थे वे भी उनसे आश्वस्त रहते थे और उनका आदर करते थे। गांधीजी का सारा सत्याग्रह और गतिविधि यहां लिखना असंभव है।

22. अंग्रेजो, भारत छोड़ो

गांधीजी ने सन् 1942 ई० में घोषणा की ''अंग्रेजो, भारत छोड़ो'' और उन्होंने भारतवासियों से कहा ''करो या मरो'' अर्थात भारत को स्वतन्त्र करो और यदि इसके लिए मरना पड़े, तो मर जाओ। परन्तु उन्होंने अंग्रेजों एवं किसी विरोधी को मारने की बात नहीं कही।

गांधीजी सहित करीब सारे नेता और सत्याग्रही कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिए गये। इसके विरोध में भारत भर में उग्र जन-विद्रोह हुआ। जमशेदपुर में टाटा इस्पात कारखाने के श्रमिकों ने नेताओं एवं सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी के विरोध में पन्द्रह दिनों की हड़ताल कर दिया। विश्वविद्यालय के 80 प्रतिशत छात्रों ने पढ़ना बन्द कर दिया। छात्रों ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय परिसर के दरवाजों को बन्द कर पुलिस का आना रोक दिया और संगठन बनाकर विश्वविद्यालय में अधिकारियों का आना रोक दिया।

गोरी सरकार ने क्रूर दमनचक्र शुरू किया। दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, मैसूर, पंजाब, कलकत्ता, मेदनीपुर आदि में पुलिस ने सत्याग्रही जनता पर गोलियां चलायीं, जिसमें एक हजार से अधिक लोग मारे गये तथा तीन हजार से अधिक लोग घायल हुए।

शासन के अत्याचार से जनता भड़क गयी और वह तोड़फोड़ तथा हिंसा पर उतर आयी। जनता ने कई पुलों, पुलिस स्टेशनों, रेल की पटरियों, तार के खंभों को नष्ट किया एवं उखाड़ा। मेदनीपुर तथा चौबीस परगना के करीब तीस हजार लोग जिनमें राष्ट्रवादी भी सैकड़ों थे, अंग्रेज-सेना के डर से एक निचली भूमि वाले टापू में शरण लिये। यहां संयोग से समुद्री तूफान आ गया। इसमें सबके प्राण संकट में आ गये। गोरे अफसरों ने इनकी सहायता नहीं करनी चाही। परन्तु कांग्रेस द्वारा उनकी कुछ सहायता हुई।

मध्य प्रदेश के चांदा जिले में चमूर नामक एक बड़े गांव में चार अफसरों की हत्या कर दी गयी। सरकार ने इसके बदले में इस गांव पर सामूहिक

जुर्माना किया, बीस को फांसी तथा छब्बीस को आजीवन कारावास दिया और पुलिस ने साठ स्त्रियों का सतीत्व नष्ट किया।

गांधीजी किसी भी आन्दोलन में हिंसा और सार्वजनिक संपत्ति की क्षति करने के विरुद्ध थे। परन्तु भीड़ को सम्हालना कठिन होता है। फिर वे जेल में थे। यदि गांधीजी जेल के बाहर होते तो वे इन सब बातों को रोकते। यदि जनता न मानती, तो वे अनशन शुरू कर देते। परन्तु वे जेल में बन्द थे।

गांधीजी का पत्राचार वाइसराय से होता रहता था, परन्तु कोई फल नहीं मिलता था। अंग्रेजों का काम था फूट डालना और राज्य करना। उन्होंने जब मजबूर होकर जिस देश को छोड़ा है तब उसे तोड़कर। आयरलैण्ड, फिलिस्तीन, साइप्रस तथा अफ्रीका के अनेक देशों के साथ उन्होंने यही किया।[1] वाइसराय ने गांधी जी के विचारों को छलपूर्ण कहा। अन्ततः गांधीजी ने जेल में ही 10 फरवरी, 1943 को इक्कीस दिन का अनशन शुरू कर दिया। इसके समर्थन में वाइसराय की कार्यकारिणी परिषद के सदस्य श्री एच० पी० मोदी, श्री नलिन रंजन सरकार तथा श्री माधव, श्री हरि अणे ने इस्तीफा दे दिया। गांधीजी का स्वास्थ्य गिरता गया। गांधी जी को जेल से मुक्त कराने के लिए दिल्ली में निर्दलीय नेताओं का सम्मेलन हुआ। गांधी जी ने इक्कीस दिन का उपवास पूरा कर लिया।

गांधीजी की पत्नी कस्तूरबा भी जेल में बन्द थीं। उनका अपने पति के पास ही 22 फरवरी, 1944 ई० को शरीरांत हो गया। गांधीजी अस्वस्थ हो गये। अतः वे बिना शर्त 6 मई, 1944 ई० को छोड़ दिये गये।

गांधीजी जेल से छूटने के बाद बम्बई में जिन्ना के घर पर उनसे मिले, परन्तु जिन्ना ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। जिन्ना पाकिस्तान बनाना चाहते थे, धीरे-धीरे कट्टर मुसलमान गांधी जी को मुसलमानों का दुश्मन मानने लगे और कट्टर हिन्दू उन्हें हिन्दुओं का शत्रु।

2 अक्टूबर, 1944 ई० को सेवाग्राम में गांधीजी की जयंती मनायी गयी। श्रीमती सरोजनी नायडू ने गांधी जी के मस्तक पर कुमकुम का तिलक लगाया और ठक्कर बापा ने उन्हें पैंतालीस लाख रुपये की थैली भेंट की जो कस्तूरबा की स्मृति में इकट्ठा किया गया था। गांधी जी ने इसका ट्रस्ट बना दिया जो ग्रामीण क्षेत्रों के स्त्रियों और बच्चों की सेवा करता रहे।

सुभाष बाबू ने भारत को आजाद करने के लिए विदेश में ''आजाद हिन्द फौज'' का संघटन किया था। गांधी जयंती के उक्त अवसर पर उन्होंने रंगून में तिरंगा झंडा फहराया और भाषण में कहा—''राष्ट्रपिता गांधी जी! हिन्दुस्तान की

---

1. **वही, पृष्ठ 216।**

आजादी की इस लड़ाई में हम आपसे आशीर्वाद मांगते हैं।''[1] यह गांधी जयंती पूरे भारत में तथा संसार के अनेक हिस्से में मनायी गयी।

23. विभाजन पूर्व दंगे

मुसलिम लीग के नेता सुहरावर्दी बंगाल के तात्कालिक मुख्यमंत्री थे। वे सिद्धान्तहीन और निर्दय थे। उन्होंने सुनियोजित ढंग से बाहर से मुसलमानों को बुलाकर कलकत्ता में दंगा करवाया। यह 16 अगस्तर, 1946 ई० को शुरू हुआ और दो दिन चलता रहा। इसमें बहुत हिन्दू मारे गये और उनकी संपत्ति नष्ट की गयी। गोरी केन्द्र सरकार ने जब कोई रक्षात्मक सहायता नहीं की, तब हिन्दू समाज संघटित होकर मुसलमानों से बदला लेने लगा। जब मुसलमान मारे जाने लगे, तब वाइसराय ने हस्तक्षेप किया। इसमें दोनों तरफ के पांच हजार स्त्री, पुरुष एवं बच्चों की जानें गयीं तथा पन्द्रह हजार घायल हुए।

इसके बाद 10 अक्टूबर को नोआखाली में भयंकर दंगा हुआ। जिसमें मुल्ला लोग साथ में रहकर जेहाद बोलते थे, और इस प्रकार वहां गांव-के-गांव हिन्दू तबाह हो गये। नोआखाली का दंगा भयंकर था। वहां पुरुष मारे गये, स्त्रियों का चरित्र हनन हुआ, बलात मुसलमान बनाया गया आदि।

गांधीजी की आज्ञा से जीवतराम भगवानदास कृपलानी तथा सुचेता कृपलानी पहले नोआखाली गये थे। कृपलानी जी ने दिल्ली लौटकर गांधी जी को सब विवरण दिया, परन्तु सुचेता कृपलानी नोआखाली में ही पीड़ितों की सेवा में रह गयी थीं। उन्होंने एक शीशी संखिया अपने पास रख लिया था कि इज्जत पर आंच आने पर जीवन समाप्त किया जा सके। गांधीजी नोआखाली गये। उन्होंने गांव-गांव घूमकर राहत कार्य शुरू करवाया तथा साम्प्रदायिक सौहार्द की महत्ता बतायी।

नोआखाली में ज्यादा तो हिन्दू पीड़ित हुए थे, परन्तु मुसलमान भी तबाह हुए थे। यह शैतानियत ऐसी है कि सबका नुकसान करती है। सुचेता कृपलानी दोनों वर्ग के पीड़ितों की सेवा में लगी थीं। जब गांधीजी पहुंचे तब उन्होंने सुचेता कृपलानी से पूछा कि जिनको सहायता दी गयी है, उनसे कुछ काम लिया गया है? सुचेता ने कहा नहीं, मैं इतना काम कहां दे पाती! और एक पीड़ित नारी गोद में बच्चा लेकर आये तो मैं उसे क्या तुरन्त भोजन या वस्त्र न दूं?

गांधीजी ने कहा ''अपना मन पत्थर का बना लो और उसको चाहे हलका काम दो, परन्तु कुछ काम दो। तुमने लोगों से बिना कुछ काम लिये जो सहायता की, वह अनुचित हुआ। उनका सर्वस्व लुट गया है, उनका स्वाभिमान

---

1. वही, पृष्ठ 226।

भी न लुटने दो।'' यह था गांधीजी का रचनात्मक सिद्धान्त।

उन्होंने जो लोग गांव छोड़कर भाग गये थे उन्हें समझाकर गांवों में भेजा और कहा कि तुम लोग कायर मत बनो, अपने घर में रहो। गांधीजी जी गांव-गांव नंगे पांव चलते थे। सुचेता कृपलानी ने पूछा कि आप चप्पल क्यों नहीं पहनते हैं। गांधी जी ने कहा कि मेरे लिए यहां ऐसा ही चलना ठीक है। अपने लोगों द्वारा किये गये पाप का प्रायश्चित कर रहा हूं। गांधीजी गांव-गांव में बताते थे कि राम-रहीम एक है।

गांधी जी कुछ महीने नोआखाली में रहकर बिहार गये, क्योंकि वहां भी 25 नवम्बर, 1946 ई० से दंगा शुरू हो गया था। यहां हिन्दुओं द्वारा मुसलमान तबाह किये गये थे। जैसे नोआखाली में हिन्दुओं की दुर्गति हुई, वैसे बिहार में मुसलमानों की। गांधीजी ने बिहार में भी आकर उनमें शान्ति का काम किया।

इसके पहले ही पंजाब के थोवा खालसा गांव में बहुत-से हिन्दुओं और सिखों को लूटकर उन्हें मार डाला गया था। जब हिन्दू और सिख मुसलमानों से लड़कर मर गये, तब बच्चों सहित चौहत्तर स्त्रियों ने श्रीमती लाजवंती के नेतृत्व में जपुजी का पाठ करते हुए कुएं में कूदकर आत्मविसर्जन किया।[1] वस्तुत: ये सारे दंगे मुसलिम लीग की क्रूरता के फल थे। ये शीघ्र पाकिस्तान चाहते थे, परन्तु उसे देना न कांग्रेस के वश की बात थी और न हिन्दुओं के वश की। सारे दंगे पहले मुसलिम लीगियों ने मुसलमानों से शुरू करवाये। पीछे जहां हिन्दू समर्थ थे वहां उन्होंने प्रतिक्रियास्वरूप वही किया। किन्तु चाहे हिन्दू हों या मुसलिम, जो सज्जन थे, दोनों वर्गों की उन्होंने रक्षा की। हिन्दुओं ने मुसलमानों की रक्षा की तथा मुसलमानों ने हिन्दुओं की। साधारण हिन्दू-मुसलमान परस्पर प्रेम से रहना चाहते हैं। ये राजनीतिबाज लोग अपने स्वार्थ के लिए दोनों को आग में झोंकते हैं।

24. देश विभाजन और स्वतन्त्रता

मिस्टर जिन्ना के नेतृत्व में अधिकतम मुसलमानों ने पाकिस्तान बनने का समर्थन किया। अंग्रेज तो भारत को काटना चाहते ही थे। जब यह बात गांधीजी के सामने आयी तब गांधी जी ने कहा कि पहले मुझे काट दो, तब भारत को काटो, परन्तु होनी बलवान होती है। भगवान कृष्ण न महाभारत युद्ध रोक सके और न उसके छत्तीस वर्ष बाद यादवों का सर्वनाश! जवाहर, पटेल तथा कोई भी नेता देश-विभाजन नहीं चाहते थे। परन्तु जब नेताओं ने देखा कि विभाजन अवश्यंभावी है, तब उन्होंने इसका कड़वा घूंट पीया और पाकिस्तान बन गया।

---

1. **वही, पृष्ठ 276।**

विभाजन से उत्पन्न समस्या से निपटने के लिए गांधी जी कलकत्ता तथा नोआखाली के लिए चल दिये। जब 15 अगस्त, सन् 1947 ई० को भारत स्वतन्त्र हुआ तब गांधी जी कलकत्ता में थे। उन्होंने वहीं स्वतंत्रता दिवस मनाया। उन्होंने उस दिन उपवास, प्रार्थना तथा गीतापाठ किया।

पश्चिमी पाकिस्तान से मुसलमानों के क्रूर व्यवहार से हिन्दू, सिख आदि भागने लगे। वे लूट लिए जाते थे, मार दिये जाते थे। उसकी प्रतिक्रिया में पूर्वी पंजाब में हिन्दुओं द्वारा मुसलमानों का उत्पीड़न शुरू हुआ। वही विपत्ति मुसलमानों पर आयी, जो हिन्दुओं पर थी। गांधीजी पंजाब जाना चाहते थे परन्तु नेहरू और पटेल ने उन्हें रुकने के लिए प्रार्थना की। वे नहीं चाहते थे कि पाकिस्तान से भारत आने वाले दुख में विक्षिप्त लोगों से उनका सामना हो जाये। उन्होंने अपने शासन-बल से स्थिति से निपटने तथा समस्या सुलझाने का प्रयत्न किया। गांधीजी की आवश्यकता बंगाल में ज्यादा थी।

कलकत्ता तथा बंगाल के अन्य क्षेत्रों में हिन्दू-मुसलिम दंगे चल रहे थे। गांधीजी ने उसे रोकने के लिए अनशन शुरू कर दिया। इसका सभी वर्गों पर गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दू, मुसलमान, सिख आदि के लोग दल-के-दल गांधी जी के पास आकर अहिंसा का आश्वासन देने लगे और उनसे अपना अनशन तोड़ने के लिए अनुरोध करने लगे।

गांधीजी दिल्ली आये। वे शरणार्थियों की शिविरों में उन्हें देखने गये जिनमें हिन्दू और मुसलमान दोनों पड़े थे। एक शिविर में पहुंचते ही गांधीजी पर गालियों की बौछारें पड़ने लगीं। यह गाली बीस मिनट तक चलती रही। गांधीजी ने सिर झुकाकर नम्रता से उसे सहा और कहा—"इन्हें गुस्सा होने का अधिकार था। ये ही तो असली दुख उठाने वाले थे। मुझे खुशी है कि इन्होंने अपना गुस्सा मेरे ऊपर उतारा। यह अच्छा ही हुआ।"[1]

25. अन्तिम दिन

भारत स्वतंत्र हुआ। कांग्रेस ने देश का शासन सम्हाला। जवाहरलाल तथा सरदार पटेल में विचार-भिन्नता बढ़ रही थी। सरदार और मौलाना आजाद भी एक-दूसरे से दूर होते जा रहे थे। गांधीजी की बातों पर नेता लोग कम ध्यान देने लगे। श्री कृपलानी जी लिखते हैं कि गांधीजी ने मुझसे कहा—"जवाहरलाल कम-से-कम मुझे समझने की कोशिश करते हैं, भले ही वे मेरी सलाह न मानें, परन्तु बल्लभ भाई समझते हैं कि मैं बुड्ढा हो गया हूं और वस्तुस्थिति समझने में असमर्थ हूं।"[2]

---

1. वही, पृष्ठ 303।
2. वही, पृष्ठ 308।

देश का बटवारा, हिन्दू-मुसलिमों का पारस्परिक रक्तपात, नेताओं द्वारा अपनी कुछ उपेक्षा की स्थिति उपस्थित होने से गांधीजी मन से पीड़ित थे। उन्होंने कहा—"यदि किसी ने अपने को प्रभु में पूरी तरह विलीन कर दिया है, तो वह निश्‍चित होकर अच्छाई और बुराई, सफलता और विफलता को प्रभु पर छोड़, किसी बात की चिंता नहीं करेगा। मुझे ऐसा लगता है कि मैं उस अवस्था को नहीं पहुंचा और इसीलिए मेरी तपस्या अधूरी रही।"[1]

हिन्दू और मुसलमानों के वैमनस्य मिटें और वे परस्पर प्रेम से रहें, इस हितचिंतन में गांधी जी ने दिल्ली में 13 जनवरी, 1948 को अनशन शुरू कर दिया। इससे प्रभावित होकर हिन्दू, सिख तथा मुसलमान उनके पास आकर उन्हें परस्पर प्रेम से रहने का आश्‍वासन देने लगे। वातावरण काफी शान्त हो गया। अतएव गांधी जी ने 18 जनवरी को अपना अनशन समाप्त कर दिया।

26. हे राम!

जो ऊपर उपवास की बात कही गयी है वह समय था। मंत्रिमण्डल की बैठक गांधी जी की शय्या के पास हुई। भारत और पाकिस्तान के बटवारे में भारत के हिस्से में अचल सम्पत्ति कुछ अधिक आयी थी इसके बदले में भारत ने पाकिस्तान को पचपन (55) करोड़ रुपये देने के लिए वचन हारा था। गांधीजी ने उसे दिलाया। यदि वे ऐसा न करते तो पाकिस्तान इस बात को राष्ट्रसंघ में ले जाता। रुपये तो अन्त में देने ही पड़ते। फजीहत अलग से होती। अतएव यह हस्तान्तरण बटवारे का ऊंचा आदर्श था। परन्तु इसको लेकर कट्टरवादी हिन्दू बहुत क्रुद्ध हो गये। ये लोग गांधीजी के लिए जगह-जगह 'विषवमन' करने लगे। इन लोगों का विचार हुआ कि गांधी को समाप्त करके ही देश की भलाई है।

महाराष्ट्र और ग्वालियर के कुछ षड्यंत्रकारियों ने मिलकर एक मदनलाल नामक व्यक्ति को गांधीजी की हत्या करने के लिए तैयार किया। उसने 20 जनवरी को गांधीजी की प्रार्थना-सभा में बम फेंका। इसमें गांधीजी बच गये, केवल बिड़लाभवन के एक प्राचीर की क्षति हुई, मदनलाल पकड़ा गया। गांधीजी ने सरकार से कहा कि उसे क्षमा कर दिया जाये।

षड्यंत्रकारियों का षड्यंत्र चलता रहा। बम्बई-सरकार तथा दिल्ली-सरकार को यह सूचना मिल रही थी कि गांधीजी की जान लेने के लिए लोग षड्यंत्र रच रहे हैं, परन्तु सरकार ने इसे गंभीरता से नहीं लिया, जबकि 20 जनवरी को उन पर बम फेंका जा चुका था। गांधीजी तो निर्भय थे। उन्हें अपने माने हुए शरीर के छूटने की कोई चिंता नहीं थी। 30 जनवरी, 1948 ई० को एक

---

1. **वही, पृष्ठ 308-309।**

विक्षिप्त हिन्दू नामधारी ने प्रार्थना-सभा में गांधीजी को गोली मार दी। गांधीजी के अन्तिम शब्द थे—हे राम!

27. हानि किसकी हुई?

सद्गुरु कबीर की साखी है—"जो ऊगै सो आथवै, फूलै से कुम्हिलाय। जो चूने सो ढहि परे, जन्मै सो मरि जाय।" गांधीजी अठहत्तर (78) वर्ष से ऊपर के हो चुके थे। जब बच्चे और जवान मरते हैं तब 78 वर्ष के बूढ़े कब तक रहते। गांधीजी की हत्या से उनकी तो कोई हानि नहीं हुई, प्रत्युत सत्य और अहिंसा के लिए अपने आप की बलि देकर वे इतिहास के पन्ने में चमकदार और अमर हो गये। हानि तो उस हत्यारे और षड्यंत्रकारियों की हुई जिन्होंने अपने मन को एक महात्मा की हत्या कर गंदा किया। और उस पवित्र हिन्दू-समाज के मस्तक पर सदैव के लिए कलंक का टीका लग गया, जो जातीय गंदगी में लिपटे होने पर भी अपनी वैचारिक उदारता के लिए इतिहास में प्रसिद्ध है। कैसा संसार है, हिन्दुत्व का केवल दंभ रखने वाले ने सच्चे हिन्दुत्व का नक्शा तोड़ दिया। हम ऐसे नालायक ठहरे कि जिन्होंने अपने आप को तिल-तिल गलाकर हमें स्वतन्त्रता दिलायी, उन्हीं के हम घातक हुए।

गांधीजी की हत्या पर सारा संसार रो दिया। भारत में तो कुहराम मच गया। हिन्दू-समाज में अपने स्वजन के मरने के तेरहवें दिन भोज करते हैं जिसे तेरही कहते हैं। गांधीजी की तेरही भारत के गांव-गांव तथा मोहल्ले-मोहल्ले में हुई। जब तक संसार का इतिहास रहेगा, तब तक गांधी जी के प्रकाश-पुंज जीवन तथा उनकी वाणी से संसार प्रेरणा लेता रहेगा।

28. सत्य गरिष्ठ होता है

गरिष्ठ खाद्य सब नहीं पचा पाते, फिर भी उसके पचाने वाले बहुत हैं, परन्तु सत्य अत्यन्त गरिष्ठ होता है। उसको पचाने वाले बहुत कम होते हैं। गांधीजी के जीवन और मिशन सत्य और अहिंसा पर आधारित थे, और ऐसा तत्त्व सार्वभौमिक होता है। इसे छोटे दिल वाले नहीं पचा पाते।

जो एक वर्ग की बात करता है वह उसका मसीहा बन जाता है, परन्तु जो वर्गविहीन पूरी मानवता की बात करता है उसे वर्गवादी बुद्धि वाले नहीं समझ पाते। इसी का फल है कि कट्टर मुसलमान गांधीजी को अपना शत्रु मानते थे और वैसे ही कट्टर हिन्दू भी उन्हें अपना शत्रु मानते थे। दलित-नेताओं ने उन्हें भला-बुरा कहा और उनके कट्टर अनुगामी आज तक वही कहते हैं, तो तथाकथित उच्च वर्गीय सनातनधर्मियों ने उन्हें गाली दी और आज भी देने के लिए तैयार बैठे हैं, परन्तु अन्त में जब मानवता की बात आती है तब सभी नेता यही कहते हैं कि हम गांधीजी के रास्ते पर हैं।

सत्य और अहिंसा छोड़कर सुख-शान्ति का कोई रास्ता ही नहीं है। चाहे हिन्दू-मुसलमान लड़ें, चाहे हिन्दू-हिन्दू, मुसलमान-मुसलमान तथा इसाई-इसाई लड़ें और चाहे परिवार के लोग लड़ें, आखिर कब तक लड़ेंगे! थोड़े समय की लड़ाई में जीवन नरक बन जाता है, फिर उसे जीवनभर कैसे चलायी जा सकती है! अतएव आवश्यकता है अहिंसा की, प्रेम की एवं समता की। यही बात गांधीजी से पांच सौ वर्ष पहले कबीर साहेब ने संसार को बतायी थी। कबीर साहेब का चरखा-करघा, राम-रहीम की एकता, धर्म की एकता, मानवता की एकता, सहनशीलता, समता, अहिंसा, सत्य, सदाचार-निष्ठा गांधीजी में प्रतिबिम्बित होते थे। इसीलिए लब्धप्रतिष्ठित विद्वान डॉ० पीताम्बर बड़थ्वाल ने कबीर और गांधी का तुलनात्मक अध्ययन ही लिख डाला है। उन्होंने लिखा है कि जब गांधीजी की हरिजन-यात्रा में उनका काशी कबीर चौरा पहुंचना हुआ, तब उन्होंने कहा कि मेरी माता कबीरपंथी थीं। बड़थ्वाल जी ने लिखा है कि गांधीजी के विचारों के स्रोत रसकिन एवं टाल्स्टाय के पास खोजने की आवश्यकता नहीं। उसका गोमुख तो कबीर-विचारों में है जिसे गांधी जी ने अपनी माता के दूध के साथ दाय रूप में पाया था। जो हो, कबीर साहेब के अधिकतर विचार गांधीजी में उतरे थे और उनके आचरण भी।

29. विचार एवं आचार पक्ष

गांधीजी ईश्वर मानते थे, परन्तु उसे विश्वनियम एवं सत्य के रूप में। वे कहते थे कि सत्य और प्रेम ही ईश्वर है। वे मानव मात्र में भेद नहीं करते थे। वे अस्पृश्यता के घोर विरोधी थे। वे राजनीति में पूर्ण अहिंसा व्रत पालन करने के लिए कटिबद्ध रहते थे। इसलिए उनके विरोधी भी उन पर विश्वास करते थे कि वे उनका अहित नहीं करेंगे। वे स्त्रियों को भी पुरुषों के समान शिक्षित होने एवं सभी दिशाओं में आगे बढ़ने की प्रेरणा देते थे। वे वर्ग-संघर्ष एवं हिंसा से दूर अहिंसात्मक और प्रजातंत्रात्मक समाजवाद में विश्वास करते थे। वे ब्रह्मचर्य के समर्थक थे। उन्होंने अपनी सैंतीस (37) वर्ष की अवस्था में ब्रह्मचर्य-व्रत ले लिया था। साथ-साथ कस्तूरबा ने भी इस व्रत को लिया। वे सादा वस्त्र पहनते थे और मिर्च-मसाले से रहित सादा भोजन करते थे। वे मांस, मछली, अण्डा एवं हर प्रकार के नशा से दूर रहते थे। वे नित्य प्रात:-सायं सर्वधर्म समभाव संबलित प्रार्थना करते थे और गीतादि धर्मशास्त्रों का अध्ययन करते थे। वे राजनीतिज्ञ होते हुए भी एक महात्मा थे।

वे सजग मितव्ययी थे। इसलिए उन्होंने जितनी भी संस्थाएं चलायीं, कहीं उन्हें घाटा नहीं पड़ता था, किन्तु हर जगह बचत ही रहती थी। वे अपने विरोधियों की सहते थे, और उन्हें या किसी को कटु शब्द नहीं कहते थे। संत संसार से निष्फिक्र होने से वे लोगों को कड़ी भाषा में भी फटकार देते हैं,

परन्तु गांधीजी जी राजनीतिज्ञ होने से ऐसा करके लोगों को एक साथ लेकर चल नहीं सकते थे। इसलिए उनकी भाषा लोचदार होती थी। इसीलिए अंग्रेज उन्हें ''एशियाई धूर्त'' तथा उनके विरोधी भारतीय 'चतुर बनिया' कहते थे। जैसे वे कहते थे कि मैं वर्ण-व्यवस्था मानता हूं। परन्तु वे छुआछूत नहीं मानते थे और अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन करते थे। इसका अर्थ यही है कि वे वर्णव्यवस्था का खुला खंडन करके 'बाभन' और 'बनिया' को नाखुश नहीं करना चाहते थे, क्योंकि उनसे भारत स्वतन्त्र करने में सहयोग लेना था, परन्तु अपने व्यवहार से वर्णव्यवस्था की दीवार को तोड़ने वाले थे।

एक उदाहरण और लें। गांधीजी कहते हैं—''एकमात्र वेद ही अपौरुषेय या ईश्वर प्रणीत हों, ऐसा मैं नहीं मान सकता। मैं तो बाइबिल, कुरान और जिंदावेस्ता को भी वेदों जितना ही ईश्वरप्रेरित समझता हूं। हिन्दू शास्त्रों को मैं मानता हूं, इसका यह अर्थ नहीं कि उनके एक-एक शब्द या हर एक श्लोक को मुझे ईश्वर प्रेरित ही मानना चाहिए।.....शास्त्रों के किसी भी ऐसे अर्थ को मैं नहीं मान सकता जो तर्क और नैतिकता से प्रतिकूल हो, फिर वह कितने विद्वतापूर्ण ढंग से क्यों न किया हो।''[1]

जब आप वेद, बाइबिल, कुरान, जिंदावेस्ता को ईश्वरप्रदत्त मानते हैं, तब उनमें विचार करने की गुंजाइश कहां है! क्या ईश्वर आपसे भी अल्पज्ञ है जो उसने उनमें कुछ सही तथा कुछ गलत रख दिया है! वस्तुत: गांधी जी चाहते थे कि सांप मर जाये और लाठी न टूटे। हिन्दू, यहूदी, इसाई, पारसी तथा मुसलमान अपनी मूल किताबों को ईश्वर-वचन मानते थे, जो जनता को एक धोखा देना है। सारी किताबें मनुष्य-रचित हैं। इसलिए सब में विचार कर सत्य को लेना चाहिए और असत्य को छोड़ना चाहिए। परन्तु ऐसा कहकर गांधीजी उन्हें खिझाना नहीं चाहते थे। इसलिए वे कहते हैं कि वे ग्रंथ ईश्वर-वचन तो हैं, परन्तु उनके सारे वचन ईश्वर के कैसे मान लें! हमें परखकर मानना चाहिए।

वे अपने छोटे दोषों को बड़े मानकर उसे त्यागने पर तत्पर रहते थे और दूसरे के बड़े दोषों को भी क्षमाकर उसे अपनाने का प्रयास करते थे। वे दूसरों की बुराइयों को कभी उभाड़ना नहीं चाहते थे। मुसलिम लीग और ब्रिटिश सरकार के विषय में उनके पास ऐसे दस्तावेज थे जिन्हें वे प्रकाशित कर देते तो जनता में उन (लीग और सरकार) के प्रति रोष प्रकट हो जाता। उन्होंने अपनी आत्मकथा इसलिए अधूरी छोड़ दी कि उसमें कई लोगों का पर्दाफाश होता।[2]

---

1. वही, पृष्ठ 359।
2. वही, पृष्ठ 348।

30. उपसंहार

संसार के इतिहास में ऐसा दूसरा उदाहरण नहीं है कि जो इतनी बड़ी राजनीति का संचालन करता हो जिसमें कि एक महा बलवान विदेशी शासन को उखाड़ फेंकना हो, फिर भी वह पूर्ण अहिंसा और साधुता का प्रयोग करता हो। कुछ-कुछ अंशों में कितने ऐसे पुराने राजनीतिक पुरुष हुए हैं जिन्होंने यात्रा में कभी स्वयं ऊंट पर बैठे हों और कभी अपने थके हुए नौकर को बैठा दिये हों, धर्मशास्त्र की प्रतिलिपि करके स्वयं की रोटी जुटाई हो या अन्त में राज-पाट छोड़कर संन्यस्त हो गये हों; परन्तु उन्होंने अपने राजनीति-काल में दूसरे संप्रदायों के पुस्तकालय जलवाये हैं, पूजास्थलों को भ्रष्ट किये हैं; निरपराधों की हत्याएं करवायी हैं, दूसरे संप्रदाय वालों को बलात अपने संप्रदाय कबूल करवाये हैं और दूसरे के राज्य हड़प गये हैं। अपने पूरे राजनीति-काल में सम्पूर्ण अहिंसा का बरताव, तप और साधुत्व की रहनी एक महात्मा गांधी में ही दिखती है। अतएव राजनीति में महात्मा गांधी विश्व में अद्वितीय हैं।

तिलक, गोखले, सुभाष, मौलाना आजाद, भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, नेहरू, पटेल आदि नेताओं की राष्ट्रभक्ति को कोई उंगली नहीं दिखा सकता; परन्तु महात्मा गांधी का आदर्श अद्वितीय है। यह वे लोग स्वयं मानते थे। हमें महात्मा गांधी के प्रकाशपुंज जीवन से प्रेरणा लेना चाहिए।

महात्मा गांधी ने अपनी ''आत्मकथा'' के बिलकुल अन्त में लिखा है—

''सत्य से भिन्न किसी परमेश्वर के होने का अनुभव मुझे नहीं हुआ है। सत्यमय होने के लिए अहिंसा ही एकमात्र मार्ग है। यह बात इन प्रकरणों के पन्ने-पन्ने से प्रकट न हुई हो तो इस प्रयत्न को व्यर्थ मानूंगा। प्रयत्न भले ही व्यर्थ हो, पर वचन व्यर्थ नहीं है। मेरी अहिंसा सच्ची होते हुए भी कच्ची है, अपूर्ण है। इससे मेरी सत्य की झांकी हजारों सूर्यों के इकट्ठा होने पर भी जिस सत्य रूपी सूर्य के तेज का पूरा अनुमान नहीं हो सकता, उस सूर्य की एक किरण मात्र का दर्शन रूप ही है। इसका संपूर्ण दर्शन अहिंसा के बिना अशक्य है, इतना तो मैं अपने आज तक के प्रयोगों के अन्त में अवश्य कह सकता हूं।

''ऐसे व्यापक सत्यनारायण के साक्षात्कार के लिए जीवमात्र के प्रति आत्मवत प्रेम होने की परम आवश्यकता है और उसकी इच्छा रखने वाला मनुष्य जीवन के एक भी क्षेत्र के बाहर नहीं रह सकता। इसी से सत्य की मेरी पूजा मुझे राजनीति में घसीट ले गयी है। जो कहता है कि धर्म का राजनीति से सम्बन्ध नहीं है वह धर्म को जानता नहीं है, यह कहने में मुझे संकोच नहीं है। यह कहने में कोई अविनय नहीं करता।

''आत्मशुद्धि के बिना जीवमात्र के साथ एकता नहीं सध सकती। आत्मशुद्धि के बिना अहिंसा धर्म का पालन सर्वथा अशक्य है। अशुद्धात्मा

परमात्मा के दर्शन करने में असमर्थ है। अत: जीवनपथ के सब क्षेत्रों में शुद्धि की आवश्यकता है। यह शुद्धि साध्य है; क्योंकि व्यष्टि और समष्टि के बीच ऐसा निकट सम्बन्ध है कि एक की शुद्धि अनेक की शुद्धि के बराबर हो जाती है, और व्यक्तिगत प्रयत्न करने की शक्ति सत्यनारायण ने सबको जन्म से ही दे रखी है।

"पर शुद्धि का मार्ग विकट है, उसका मैं तो प्रतिक्षण अनुभव करता हूं। शुद्ध होने के मानी हैं, मन, वचन और काया से निर्विकार होना, राग-द्वेष से रहित होना। इस निर्विकारिता को प्राप्त करने का प्रतिक्षण प्रयत्न करते हुए भी मैं उस स्थिति तक अभी पहुंच नहीं सका हूं, इससे लोगों की स्तुति मुझे भुलावे में नहीं डाल सकती। यह स्तुति अक्सर मुझे चुभती है। मन के विकारों को जीतना जगत को शस्त्र-युद्ध से जीतने की अपेक्षा भी मुझे कठिन लगता है। हिन्दुस्तान में आने के बाद भी मैंने अपने अन्तर में छिपे हुए विकारों को देखा है। देखकर शरमाया हूं, पर हिम्मत नहीं हारी है। सत्य के प्रयोग करने में मैंने रस लूटा है। आज भी लूट रहा हूं। पर मैं जानता हूं कि अभी मुझे विकट रास्ता तय करना है। उसके लिए मुझे शून्यवत बनना है। मनुष्य जब तक स्वेच्छा से अपने को सबसे पीछे न रखे—सबसे छोटा न माने, तब तक उसकी मुक्ति नहीं है। अहिंसा नम्रता की पराकाष्ठा है और इस नम्रता के बिना मुक्ति किसी काल में भी नहीं है, यह अनुभव-सिद्ध बात है। ऐसी नम्रता की प्रार्थना करते हुए उसमें जगत की सहायता की याचना करते हुए इस समय तो इन प्रकरणों को समाप्त करता हूं।"[1]

महात्मा गांधी के ग्यारह सूत्र हैं—

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह, शरीरश्रम, अस्वाद, सर्वत्रभय-वर्जन, सर्वधर्म समानत्व, स्वेदशी, स्पर्शभावना—विनयव्रत निष्ठा से ये एकादश सेव्य हैं।

---

1. **महात्मा गांधी कृत : आत्मकथा, पृष्ठ 455-56।**